प्रसंगशः

आलोक मेहता

फरियादी के लिए जहांगीरी घंटा

गणतंत्र में इंटरनेट और जैमर के सहारे आम आदमी से कटते राजनेता

संचार क्रांति पर गौरवान्वित होते हुए हमें समझाया जाता है, 'आप इंटरनेट के जरिये सीधे राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री को ई-मेल पर अपनी शिकायत या समस्या भेज सकते हैं।' उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के अधिकारी ध्यान दिलाते हैं, 'गांव का किसान कंप्यूटर पर मंडी के भाव देखकर अपनी उपज का सही दाम ले सकता है।' कंप्यूटर क्रांति के बाद भारतीय नागरिक ही नहीं, दुनिया के किसी कोने में बैठा व्यक्ति राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम को विज्ञान के किसी पेचीदा मुद्दे पर अपनी समस्या भेजकर जवाब पा सकता है। निश्चित रूप से दुनिया के जाने-माने वैज्ञानिक और अर्थशास्त्री के राष्ट्रपति तथा प्रधानमंत्री पद पर होने के कारण लोकतांत्रिक भारत का हर व्यक्ति गौरव का अनुभव कर सकता है। इसके साथ ही गणतंत्र दिवस पर हम विश्व के सामने सिर उठाकर यह दावा भी कर सकते हैं कि डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, के.आर. नारायणन, ज्ञानी जैल सिंह, डॉ. राजेंद्र प्रसाद और डॉ. मनमोहन सिंह जैसे व्यक्ति बेहद गरीब और निम्न आय वर्ग के परिवारों से निकलकर देश के शीर्षस्थ पदों पर पहुंच गए। डॉ. कलाम और मनमोहन सिंह की सफलता का एक कारण यह भी माना जाता है कि उन्होंने शीर्ष पदों पर पहुंचने से पहले तत्कालीन प्रधानमंत्रियों और राष्ट्रपतियों के समक्ष बेबाक ढंग से अपनी बातें रखीं। यही क्यों, एक समय रहा है जब नेहरू, इंदिरा गांधी और राजीव गांधी जैसे नेताओं तक पहुंचकर गरीब से गरीब आदमी अपनी बात सुना सकता था। इमरजेंसी के पहले तक इंदिरा गांधी के घर के दरवाजे भी हर सुबह दो घंटे आम आदमी के लिए खुले रहते थे।

अब गणतंत्र की 55वीं वर्षगांठ मनाते समय स्थिति बिल्कुल बदली हुई दिखाई दे रही है। पिछले शुक्रवार लखनऊ के पास एक गांव स्टही की एक 18 वर्षीय लड़की अर्चना अपने परिवार पर हो रही ज्यादती का दुखड़ा रोने राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम के सामने पहुंच गई। वह केवल चिल्लाकर अपनी बात कह पाई। रोती-बिलखती इस लड़की को राष्ट्रपति के पास नहीं पहुंचने दिया गया और जिलाधिकारी एवं सुरक्षा कर्मचारी उसे सभा स्थल से बाहर खींच ले गए। राष्ट्रपति स्टही गांव में प्रतिभाशाली छात्राओं को छात्रवृत्ति देने के लिए इस कार्यक्रम में गए थे। उन्हीं छात्राओं के बीच से उठकर इस गरीब अर्चना ने यह दुहाई दी कि उसके परिवार की पुश्तैनी पौने दो बीघा जमीन का एक हिस्सा पहले प्रशासन ने छीना और अब गांव के बाहुबलियों ने शेष बची जमीन पर कब्जे की तैयारी कर ली है। वह देश के सर्वोच्च नेता से सहायता और हस्तक्षेप की गुहार लगा रही थी। उसके पास कोई धारदार हथियार या लाठी नहीं थी। वैसे भी ऐसे कार्यक्रमों में उपस्थित दर्शक कड़ी सुरक्षा-व्यवस्था से निकलकर अंदर पहुंचते हैं। इस मासूम लड़की की कोई संदिग्ध पृष्ठभूमि भी नहीं थी। लेकिन इस लड़की को न केवल सभा स्थल से बाहर निकाल फेंका गया, अगले ही दिन स्थानीय अस्पताल के प्रशासन ने उसे नर्स की छोटी-मोटी नौकरी से भी इस आधार पर निकाल दिया कि उसने आतंकवादी की तरह राष्ट्रपति के सामने पहुंचने की कोशिश क्यों की। उसे 15 दिन की बची तनख्वाह देकर घर भेज दिया गया। छोटे से अस्पताल में दिन-रात खटने वाली अर्चना को तनख्वाह के नाम पर महीने में मात्र 900 रुपये मिलते थे। मतलब लगभग 30 रुपये रोज। उसके पिता सुंदरलाल पर तो मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा क्योंकि नकद आमदनी तो इसी बिटिया के हाथ से होती थी। अर्चना को अपने किए का कोई अफसोस नहीं है। वह कहती है, 'मुझे राष्ट्रपतिजी का सुरक्षा कवच भेदने पर पछतावा नहीं है। वह हमारे राजा हैं और अगर राजा के सामने हम अपनी फरियाद नहीं उठाएंगे तो किसके सामने लेकर जाएंगे?'

> **वह कहती है, 'मुझे राष्ट्रपतिजी का सुरक्षा कवच भेदने पर पछतावा नहीं है। वह हमारे राजा हैं, और अगर राजा के सामने हम अपनी फरियाद नहीं उठाएंगे तो किसके सामने लेकर जाएंगे?'**

अर्चना अकेली नहीं है। इस देश की हजारों युवतियां, युवक, बुजुर्ग सामाजिक ज्यादतियों, गरीबी और बेरोजगारी से निजात के लिए देश के राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री से बहुत आस लगाए रहते हैं। वे सत्ता में बैठे हर बड़े व्यक्ति को 'राजा' ही मानते हैं। अपनी परंपरा और संस्कृति में उन्हें अयोध्या के राजा राम, उज्जैन के विक्रमादित्य से लेकर मुगल बादशाह अकबर और जहांगीर के बड़े-बड़े किस्से सुनने को मिलते रहे हैं। कहते हैं कि जहांगीर ने तो हर सामान्य फरियादी के लिए महल के बाहर एक बड़ा घंटा लगा रखा था और ऐसे मौके भी आए जब आधी रात को भी फरियादी घंटा बजाने पहुंच गए और राजा ने शयन-कक्ष से बाहर निकलकर फरियाद सुनी। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान तिलक, गांधी, सुभाषचंद्र बोस और जवाहरलाल नेहरू ने भी गांव-गांव घूमकर लोगों को अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने की बात सिखाई। आजादी के बाद लोकतंत्र की जड़ें भले ही मजबूत हुई हों, सत्ता-व्यवस्था जनता से दूर होती चली गई है। दो पूर्व-प्रधानमंत्रियों की आतंकवादियों द्वारा नृशंस हत्या तथा कुछ क्षेत्रों में उग्रवादी संगठनों की सक्रियता के कारण पिछले वर्षों के दौरान शीर्ष नेताओं के सुरक्षा के घेरे अधिकाधिक मजबूत होते चले गए हैं। बहुत कम ऐसे नेता हैं जो सुरक्षा-व्यवस्था तोड़कर आम आदमी के संपर्क में रहना चाहते हों। बड़े पदों पर पहुंचते ही वे सुरक्षा-व्यवस्था के बंधक-से बन जाते हैं। सभाओं में वे राजा-महाराजाओं की शान-शौकत के साथ ही जाते हैं। वोट के चक्कर में वे किसी शादी-ब्याह या किसी धार्मिक उपासना स्थल पर भी जाते हैं तो ब्लैक कमांडो उन्हें घेरे रहते हैं। दिल्ली में तो कई बार पांच सितारा होटल भी किले का रूप ले लेते हैं। प्रशासन में व्यापक भ्रष्टाचार और निचले स्तर पर ज्यादतियों के असली जिम्मेदार प्रशासकीय अधिकारी निरंतर ऐसा दबाव बनाए रखते हैं कि बड़े नेता जनता से अधिकाधिक दूर रहें और उन्हें असलियत का पता ही न चले। राजनीतिक दलों के संगठनात्मक ढांचे बुरी तरह चरमरा गए हैं। दिल्ली, लखनऊ, भोपाल, जयपुर, पटना, रांची, मुंबई, चेन्नई या बेंगलूर जैसे शहरों में किसी प्रभावशाली व्यक्ति पर ज्यादती की छोटी सी घटना सामने आने पर बहुत से संगठन सक्रिय हो जाते हैं। लेकिन अर्चना जैसी गरीब औरतों की सुनवाई के लिए किसी महल या दरबार के आगे घंटा नहीं लटका है, जिसे निरंतर बजाकर सत्ता-व्यवस्था को कुंभकर्णी नींद से जगाया जा सके। लोकतंत्र में प्रशासन के विकेंद्रीकरण के अभियान के तहत पंचायतों का महत्व कुछ बढ़ा है। लेकिन आज भी अनेक गांव ऐसे हैं, जहां पंचायत में भी उन लाठी-बंदूकधारियों या धनपतियों का वर्चस्व है जो गरीबों को कीड़े-मकोड़े की तरह कुचलना अपना अधिकार मानते हैं। गणतंत्र दिवस की धूमधाम के बीच लोकतंत्र के प्रहरियों को इस बात की समीक्षा क्यों नहीं करनी चाहिए कि गरीब आदमी के अधिकारों, जान-माल की सुरक्षा कैसे सुनिश्चित हो? अखबार, टी.वी. चैनल, मोबाइल फोन और इंटरनेट की अत्याधुनिक सुविधाओं का उपयोग अब भी लाखों लोग नहीं कर सकते हैं। लोकतंत्र में उनकी जान भी उतनी ही कीमती है, जितनी शीर्षस्थ नेताओं की। गणतंत्र की जयकार के लिए हर गांव और गली के गण का सम्मानित और सुरक्षित होना आवश्यक है। ●